प्रसंगश:

आलोक मेहता

शिक्षक की आरती उतारने का ढोंग

ठेके पर नियुक्त शिक्षकों का उपयोग कहीं तालियां बजवाने और बोगस मतदान के लिए तो नहीं

अमेरिकी राजनीतिज्ञ इन दिनों बड़े धर्म संकट में हैं। उन्हें सरकार द्वारा पोषित स्कूलों के लिए धन उपलब्ध कराना है और करदाताओं पर अधिक बोझ नहीं डालना है। वहां ऊंची शिक्षा महंगी है लेकिन स्कूली शिक्षा के लिए सरकार औसतन एक छात्र पर करदाता की जेब से 8 हजार डॉलर निकालती है। स्कूली शिक्षा 13 वर्ष की होने के कारण यह खर्च लगभग एक लाख डॉलर बैठता है। अब सरकार को 35 अरब डॉलर की व्यवस्था करनी है। अमेरिकी नेता टैक्स बढ़ाने के बजाय चतुराई से जनता को दी जाने वाली सुविधाओं के अन्य खर्चों में कटौती कर रहे हैं। दूसरा तरीका यह खोजा गया है कि प्राइवेट स्कूलों की ओर बढ़ रहे झुकाव को प्रोत्साहित किया जाए। अधिक आमदनी वाले अमेरिकियों को वैसे यह नहीं भाता कि उनके पैसों से निम्न और मध्यम आय वर्ग वालों के बच्चों को पढ़ाई की सुविधाएं मिलें। नेता कुछ संतुलन बना रहे हैं। उन्हें अमेरिकी शिक्षा में हो रही गिरावट की चिंता है। लेकिन भारतीय नेताओं को क्या यह चिंता है? वे तलवार लटकाकर तालियां बजवाने में माहिर हैं। स्कूली शिक्षा के विस्तार के नाम पर वे राजनीतिक या वैयक्तिक समर्थन करने वालों की भीड़ बढ़ाने की कोशिश हर राज्य में कर रहे हैं। शुरुआत मध्य प्रदेश से हुई जहां प्राथमिक शिक्षा देने के लिए कॉन्ट्रैक्ट यानी ठेके पर 1,500 रुपये मासिक वेतन पर शिक्षक भर्ती किए जाने लगे। एक कांग्रेसी सरकार का यह फॉर्मूला पश्चिम बंगाल की प्रगतिशील वामपंथी या अमेरिका की तरह साइबर नगरों का स्वर्ग बनाने का सपना दिखाने वाली क्षेत्रीय तेलुगु देशम पार्टी की सरकार को भी रास आ गया। भारतीय जनता पार्टी की सरकार तो कांग्रेस परंपरा को आदर्श मानती ही है। देश में बढ़ती बेरोजगारी के कारण कम से कम तनख्वाह पर काम के लिए तैयार रहने वालों की कमी तो है ही नहीं। मजा यह कि ऐसे शिक्षक-शिक्षिकाओं की भर्ती में भी राजनीतिक पैरवी, रिश्वत, शोषण का सिलसिला चलता रहता है। अर्द्ध शिक्षित युवक बच्चों को अक्षर ज्ञान भले ही करवा दें, किसी विषय के योग्य प्रशिक्षित शिक्षक की तरह शिक्षा तो नहीं दे सकते। ऐसे हजारों तथाकथित शिक्षकों से चुनावी ड्यूटी करवाना सत्ताधिकारियों के लिए वरदान है क्योंकि ये बोगस मतदान में आंख मूंदकर सहयोग दे सकते हैं। मतदान से कुछ दिन पहले सभाओं में जिंदाबाद के नारे भी लगा सकते हैं। महिला होने पर जरूरत के अनुसार मजबूरी में बिस्तर बिछा या गर्म कर सकती हैं। शिक्षा के क्षेत्र में शोषण के विरुद्ध अधिकांश राजनीतिक दल चुप रहते हैं लेकिन सड़क, मकान, बस, हवाई जहाज या हथियारों की ठेकेदारी या खरीदी में अपनी हिस्सेदारी के लिए दिन-रात लड़ाई लड़ते हैं। दूध या कोला में मिलावट पर हंगामा करने से उन्हें संबंधित पक्षों से मोटी रकम मिलने की उम्मीद रहती है। शिक्षा में मिलावट पर चिल्लाने से उन्हें क्या मिलेगा?

प्राथमिक शिक्षा के लिए ठेके पर 1,500 रुपये मासिक वेतन पर शिक्षक भर्ती किए जाने का यह कांग्रेसी फॉर्मूला प. बंगाल की प्रगतिशील वामपंथी और क्षेत्रीय तेलुगु देशम पार्टी की सरकार को भी रास आ गया।

हर साल श्राद्ध कर्म की तरह 5 सितंबर को सरकार 'शिक्षक-दिवस' धूमधाम से मनाती है। औपचारिक समारोहों में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन से लेकर संदीपनि, वशिष्ठ, द्रोणाचार्य, रामकृष्ण परमहंस तक का स्मरण किया जाता है। लेकिन उन महान गुरुओं की तरह आधुनिक भारत के गुरु तैयार करने का राजनीतिक संकल्प नहीं दिखता। उदारीकरण के दौर में अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, आस्ट्रेलिया जैसे संपन्न देशों के साथ मुकाबला कर सकने के दावे किए जाते हैं लेकिन जहां अमेरिका में प्रति छात्र औसतन 8 हजार डॉलर खर्च होते हैं, वहां भारत में प्रति छात्र औसतन 1,100 रुपये से अधिक खर्च नहीं किया जाता। नेताओं की सुरक्षा के लिए सामान सूंघने वाले कुत्तों पर महीने में 5-7 हजार रुपये खर्च करने में सरकार को कोई कष्ट नहीं होता लेकिन शिक्षा के जरिये पूरे समाज की रक्षा कर सकने की क्षमता रखने वाले शिक्षक पर 1,500 रुपये खर्च करना भी उन्हें बोझ-सा लगता है। स्तर की बात दूर रही, देश के विभिन्न हिस्सों में आज भी हजारों शिक्षकों की कमी है। एक मोटे अनुमान के अनुसार देश में लगभग 40 लाख नए शिक्षकों की आवश्यकता है। भारत सरकार ने सर्व शिक्षा अभियान के नाम पर गौरव के साथ दावा किया है कि 2003-2004 के लिए शिक्षकों के चार लाख पद स्वीकृत किए गए हैं। इसी तरह शिक्षा गारंटी योजना के तहत छह लाख इंस्ट्रक्टर रखे जाने का प्रस्ताव है। केंद्र सरकार ने 31 लाख शिक्षकों के लिए 'शिक्षक अनुदान' का प्रावधान किया है और 34 लाख शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम बनाया है। प्रचारात्मक आंकड़ों का यह मायाजाल इन तथ्यों को कहीं स्पष्ट नहीं करता कि शिक्षकों और स्कूलों की दयनीय स्थितियां सुधारने के लिए इस वित्तीय वर्ष या आने वाले वर्षों में क्या होने वाला है। अमेरिका में अगस्त में हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार 81 प्रतिशत शिक्षक ठीक से शिक्षित और प्रशिक्षित हैं तथा उन्हीं विषयों को पढ़ाते हैं, जिनमें उनकी समुचित योग्यता है। भारत में तो स्कूली शिक्षकों के लिए इस समय कोई मानदंड नहीं है। टीचर (शिक्षक) को इंस्ट्रक्टर की श्रेणी में भर्ती करने का मतलब उसे जनरल प्रैक्टिशनर बनाना है, ताकि वह न्यूनतम योग्यता के साथ न्यूनतम शिक्षा दे सके। पेप्सी में अंतरराष्ट्रीय मानदंडों पर पूरे देश में हाहाकार हो सकता है लेकिन शिक्षा के लिए राष्ट्रीय मानदंड ही तय नहीं होता। हर सरकार ही नहीं, हर मंत्री के अलग-अलग मानदंड, अलग पाठ्यक्रम, पसंदीदा पुस्तकें और लेखक हैं। विज्ञान और टेक्नालॉजी में शिखर पर पहुंचने का संकल्प है लेकिन हजारों स्कूलों में विज्ञान की प्रयोगशालाएं केवल नाम के लिए हैं या नहीं हैं। जब फर्नीचर, टाट-पट्टी, किताबों और स्कूली भवन की छत के पैसे सरकार नहीं देती तो प्रयोगशालाएं कहां से बनेंगी? इसी सप्ताह दिल्ली उच्च न्यायालय ने सरकार को निर्देश दिया कि सरकारी स्कूलों में चार महीने के भीतर बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करवाई जाएं। दिल्ली के स्कूलों के लिए कहीं बिल्डिंग नहीं है तो कहीं ब्लैकबोर्ड, पीने का पानी, शौचालय, बिजली की सुविधाएं नहीं हैं। प्राथमिक शिक्षा के लिए 28 राज्यों के 576 जिलों में करीब 3 हजार करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान हो गया लेकिन इसमें से नेताओं और अफसरों की जेबों में 30 से 40 प्रतिशत पहुंच गया तो शिक्षकों तक कितना हिस्सा पहुंचेगा? सरकार स्वयं यह भी मानती है कि साक्षरता का रिकार्ड 65.38 प्रतिशत तक पहुंचा है। इसमें 10-15 प्रतिशत कागजी खानापूर्ति हुई तो 50 प्रतिशत आबादी अब भी निरक्षर मानी जाएगी। सबसे खराब स्थिति आदिवासी इलाकों की है। उनकी सुध लेने के लिए न नेता हैं, न अफसर हैं और न ही शिक्षित समुदाय। संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न संगठनों के सहयोग से 102 जिलों में स्कूली शिक्षा की परियोजनाओं का कार्यक्रम शुरू हुआ लेकिन बिहार जैसे राज्यों में क्रियान्वयन की स्थिति बदतर है। शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दिए बिना क्या आर्थिक विकास और आधुनिक भारत का कोई स्वप्न साकार हो सकेगा? ●